संविधान दिवस विशेष : 'क्या आज भी उतना ही प्रासंगिक है संविधान ?

आज समूचा देश 26 नवंबर के दिन अपना संविधान दिवस मना रहा है और इसकी शुरूआत 2015 से हुई क्योंकि ये वर्ष संविधान निर्माता डॉ भीमराव अंबेडकर के जन्म के 125वें साल के रूप में मनाया गया था। आज संविधान को अंगीकृत किये हुए देश को 66 वर्ष का समय हो गया है लेकिन मौजूदा समय में सबसे बड़ा प्रह्न यह है कि क्या आज भी हमारा संविधान उतना ही प्रासंगिक है या फिर राजनीतिक बेड़ियों में जकड़ कर नेताओ द्वारा अपने हिसाब से प्रयोग किया जा रहा है क्योंकि किसी को भी देशहित नही दिख रहा है सबके सब अपने राजनैतिक हितों की पूर्ति में लगे दिखाई देते हैं ।

आपको बता दें कि 26 नवम्बर 1949 को भारतीय संविधान सभा द्वारा इस संविधान को अपनाया गया और 26 जनवरी 1950 को इसे एक लोकतांत्रिक सरकार प्रणाली के साथ लागू किया गया था। 26 नवंबर का दिन संविधान के महत्व का प्रसार करने लिए चुना गया था।

सबसे खास बात यह है कि विश्व में भारत का संविधान सबसे बड़ा है, इसमें 448 अनुच्छेद, 12 अनुसूचियाऔर 94 संसोधन शामिल हैं। गौरतलब हो कि , 29 अगस्त 1947 को भारत के संविधान का मसौदा तैयार करने वाली समिति की स्थापना हुई जिसमें अध्यक्ष के रूप में डॉ भीमराव अम्बेडकर की नियुक्ति हुई। संविधान का मसौदा तैयार करने वाली समिति हिंदी तथा अंग्रेजी दोनों में ही हस्तलिखित और कॉलीग्राफ्ड थी- इसमें किसी भी तरह की टाइपिंग या प्रिंट का प्रयोग नहीं किया गया। सबसे खास बात यह है कि जिस दिन संविधान तैयार किया जा रहा था, उस दिन बारिश हो रही थी। भारत की संस्कृति में इसे शुभ संकेत माना जाता है।

संविधान को अपनाने से ठीक एक दिन पहले यानि 25 नवंबर 1949 को संविधान सभा को अंतिम बार सम्बोधित करते हुए डॉ. बी आर आंबेडकर ने लोकतंत्र के पक्ष में अपना यादगार भाषण दिया था। वो संविधान सभा की प्रारूप समिति के अध्यक्ष थे। उनका यह भाषण आज ६५ वर्षों बाद भी उतना ही प्रासंगिक है, जितना तब था। उन्होंने भारतीय लोकतंत्र को बनाये रखने के लिए तीन बातें सुझाईं थीं। उन्हें उन्हीं के शब्दों में प्रस्तुत करता हूँ-
"अगर हम लोकतंत्र को बनाये रखना चाहते हैं न सिर्फ स्वरुप में बल्कि यथार्थ में, तो हमें क्या करना चाहिए ? मेरे विचार में पहली जरुरी चीज है कि हम अपने सामाजिक-आर्थिक उद्देश्यों को पाने के लिए संविधान के सुझाये रास्ते पर चलें। इसका मतलब है कि हम क्रांति के खूनी रास्ते को छोड़ दें। इसके

मायने यह भी हैं कि हम सत्याग्रह, असहयोग और सिविल नाफरमानी के रास्ते को भी छोड़ दें। जब सामाजिक-आर्थिक उद्देश्यों को पाने के लिए संविधान सम्मत कोई रास्ता ही न बचा हो, तो गैर-संवैधानिक तरीकों के इस्तेमाल को न्यायसंगत ठहराया जा सकता है। पर जब संविधान सम्मत रास्ते खुले हों, तो गैर-संवैधानिक तरीकों के लिए कोई कारण नहीं दिया जा सकता। ऐसे तरीके 'अराजकता के व्याकरण' के अलावे कुछ नहीं हैं, और जितना जल्दी हम उन्हें छोड़ दें यह हमारे लिए उतना ही बेहतर होगा।"

लेकिन अगर हम मौजूदा समय की स्थितियों पर गौर करें तो आज भी चुनौतियाँ जस की टीस हैं । दरअसल , कड़वी सच्चाई तो यह है कि आजादी के बाद से आजतक जिस आम आदमी के विकास अथवा सुशासन का ढिंढोरा हर आम चुनाव में पीटा जाता है, उसकी माली हालत दिन-प्रतिदिन खराब ही होती जा रही है। विभिन्न 'राजनैतिक डायन' की काली करतूतों का दुष्प्रभाव यह दिखाई दे रहा है कि अब सारा समाज ही सवर्ण-पसमांदा, पिछड़ा-अतिपिछड़ा, दलित-महादलित, अल्पसंख्यक-बहुसंख्यक आदि खेमे में विभक्त किया जा चुका है। कोढ़ में खाज यह कि उनमें परस्पर आपसी सद्भाव पैदा करने के बजाय नेताओं द्वारा अपने-अपने वोट बैंक के मद्देनजर परस्पर अन्तर संघर्ष के विषबीज डोभे जा रहे हैं, जिससे तैयार विषवृक्ष के विषाक्त फलों को खाना कोई पसंद नहीं करने वाला।

इन बातों से इतर पिछले कुछ समय से अति अतिबौद्धिक लोगों द्वारा संविधान की अखंडता और संप्रभुता को भी चोंट पहुंचाई जा रही है और इसके लिए वो लोग अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को अपना हथियार बना रहे हैं । लेकिन सबसे बड़ी बात तो यह है कि देश की अखंडता और संप्रभुता से बड़ी अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता भी नही हो सकती है । क्योंकि जब देश की अखंडता ही अक्षुण्ण नही रहेगी तो अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के क्या मायने ! आज से चार दशक पहले इस देश में "गरीबी हटाओ" का ऐलान किया गया, टूटती उम्मीद फिर से स्फूर्त हो गयी थी। गरीबी बहुत तो नहीं हटी लेकिन इस दौरान गरीबी महज़ अब मानसिक स्थिति बनकर ज़रूर रह गयी है। यह मज़ाक बस शासक-वर्ग ही कर सकता है। गरीबी को कम दिखाने के लिए आँकड़े बदल दिए जाते हैं, मानक परिवर्तित हो जाता है और "हमारा देश आगे बढ़ रहा है" के नारे पाट दिए जाते हैं।

* 68 दिन की सुनवाई में देश का सबसे बड़ा फैसला –
सुप्रीम कोर्ट के 12 जज भारतीय इतिहास का सबसे महत्वपूर्ण फैसला देने के लिए बैठे। केशवानंद भारती बनाम केरल राज्य के मामले की सुनवाई 68 दिन चली थी। इस दौरान कानूनी बिरादरी ने जो कड़ी मेहनत की और विद्वता दिखाई वह असाधारण थी। सैकड़ों फैसलों की नज़ीर दी गई। एटार्नी जनरल ने तो सरकार के पक्ष में 71 देशों के संवैधानिक प्रावधानों की तुलना पेश कर दी। सवाल एक ही था कि क्या संविधान में संशोधन करने का संसद के अधिकार की कोई सीमा नहीं है ?इस संबंधी अनुच्छेद 368 को सतही तौर पर पढ़ें तो उसमें संसद के लिए कोई मर्यादा दिखाई नहीं देती। आखिर जजों ने 703 पेज के फैसले में कहा कि संसद संविधान के किसी भी हिस्से को संशोधित कर सकती है,जब तक वह संविधान के मूल ढांचे में फेरबदल या संशोधन न करे। इस अत्यधिक विभाजित फैसले में 7 जज इसके पक्ष में तो 6 जज विरोध में थे।

बाद में हुई घटनाओं से साबित हुआ कि'मूल ढांचे'के सिद्धांत ने ही भारतीय लोकतंत्र को

बचाया।केशवानंद भारती मामला इंदिरा गांधी की सरकार व न्यायपालिका के बीच हुए गंभीर टकरावों की शृंखला का चरम बिंदु था। पंजाब के गोलक नाथ मामले में सुप्रीम कोर्ट ने कड़ा रुख अपनाया था कि संसद मूलभूत अधिकारों से छेड़छाड़ नहीं कर सकती। दो साल बाद इंदिरा गांधी ने बैंकों का राष्ट्रीयकरण कर दिया मुआवजे में मामूली रकम के ऐसे बॉन्ड दिए,जिनका भुगतान दस साल बाद होना था।सुप्रीम कोर्ट ने इसे खारिज कर दिया। 1970 में पूर्व रियासतों के प्रमुखों को दिया जाने वाला प्रिवी पर्स यानी सालाना भुगतान बंद कर दिया गया। यह उस वादे का उल्लंघन था,जो सरदार पटेल ने विलय करने वाले शासकों से किया था। कोर्ट ने इसे भी खारिज कर दिया। तीन फैसले खारिज होने से तिलमिलाई इंदिरा गांधी अदालतों पर लगाम लगाना चाहती थीं। उन्होंने तीन संविधान संशोधन किए और फैसले दरकिनार कर दिए। इसे केरल के एक मठ के प्रमुख केशवानंद भारती ने चुनौती दी,जिन्हें केरल सरकार ने अपने मठ की जमीन का प्रबंधन करने से रोका था। फिर 1975 में आपातकाल घोषित हुआ और सुप्रीम कोर्ट में आठ नए जज नियुक्त हुए। चीफ जस्टिस एनएन रे ने 13 जजों की बेंच गठित कर केशवानंद भारती मामले की समीक्षा करने की कोशिश की। नानी पालखीवाला ने पहले दिया फैसला न बदलने के पक्ष में जो दलीलें दीं,वह देश के विधि इतिहास में श्रेष्ठतम मानी जाती हैं। रे को तब शर्मिंदगी का सामना करना पड़ा,जब पता लगा कि कोई समीक्षा याचिका ही दायर नहीं की गई थी। अन्य जजों ने इसका विरोध किया और दो दिन की दलीलों के बाद 13 जजों की बैंच खारिज कर दी गई। यदि सुप्रीम कोर्ट के जजों का बहुमत कहता कि संसद संविधान के किसी भी हिस्से को संशोधित कर सकती है तो देश एक पार्टी के तानाशाही में चला जाता।

गौरतलब है कि बाबा साहेब आंबेडकर ने संविधान बनाते वक्त इस बात की उम्मीद थी कि, कुछेक सालों में इस देश में संविधान का राज होगा, देश में हाशिये पर रह रहे लोगों को प्राथमिकता के तौर पर मुख्य-धारा में जोड़ा जायेगा। सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक प्रजातंत्र कायम हो जायेगा। परन्तु बाबा साहेब की उम्मीद भी तार-तार हो गयी, उनके उम्मीदों का पुल ध्वस्त हो गया। दलित-पिछड़े आज तक मुख्य-धारा से मीलों दूर हैं, दलितों का दमन आम सी बात हो गयी। दशकों गुज़र गए, एक व्यक्ति ने कितने संवैधानिक संशोधन देखे लेकिन उसके जीवन-स्तर में कोई संशोधन नहीं हुआ। आज भी शोषित समाज, संविधान के राज की उम्मीद लगाये बैठा है।कुलमिलाकर आज का दिन समस्त देशवासियों के लिए हर्षोल्लास का दिन है लेकिन सबसे बड़ा प्रश्न यह है कि क्या वाकई मौजूदा समय में हमारे संविधान की प्रासंगिकता उतनी ही है जितनी कि जब उसे देशहित में अंगीकृत किया गया था ! आज किसी मुद्दे पर विपक्ष की भूमिका और तमाम राजनीतिक दलों की कार्यप्रणाली भी एक लोकतान्त्रिक व्यवस्था की गरिमा को गिराती है जिसका सीधा प्रभाव हमारे संविधान पर पड़ता है क्योंकि संविधान हमारे देश की आत्मा है ।